क्या आप मां बनने जा रही हैं

मातृकला

- गर्भावस्था में देखभाल
- गर्भावस्था में योगासन एवं व्यायाम
- गर्भावस्था की समस्याएँ एवं समाधान

क्या आप माँ बनने जा रही हैं...?

मातृकला

वी एण्ड एस पब्लिशर्स

प्रकाशक

वी एण्ड एस पब्लिशर्स

F-2/16, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002
☎ 23240026, 23240027 • फैक्स: 011-23240028
E-mail: info@vspublishers.com • *Website:* www.vspublishers.com

क्षेत्रीय कार्यालय : हैदराबाद
5-1-707/1, ब्रिज भवन (सेन्ट्रल बैंक ऑफ इण्डिया लेन के पास)
बैंक स्ट्रीट, कोटी, हैदराबाद-500 095
☎ 040-24737290
E-mail: vspublishershyd@gmail.com

शाखा : मुम्बई
जयवंत इंडस्ट्रिअल इस्टेट, 1st फ्लोर-108, तारदेव रोड
अपोजिट सोबो सेन्ट्रल, मुम्बई - 400 034
☎ 022-23510736
E-mail: vspublishersmum@gmail.com

फ़ॉलो करें:

© **कॉपीराइट:** वी एण्ड एस पब्लिशर्स

ISBN 978-93-521512-2-6

DISCLAIMER

इस पुस्तक में सटीक समय पर जानकारी उपलब्ध कराने का हर संभव प्रयास किया गया है। पुस्तक में संभावित त्रुटियों के लिए लेखक और प्रकाशक किसी भी प्रकार से जिम्मेदार नहीं होंगे। पुस्तक में प्रदान की गयी पाठ्य सामग्रियों की व्यापकता या सम्पूर्णता के लिए लेखक या प्रकाशक किसी प्रकार की वारंटी नहीं देते हैं।

पुस्तक में प्रदान की गयी सभी सामग्रियों को व्यावसायिक मार्गदर्शन के तहत सरल बनाया गया है। किसी भी प्रकार के उद्धरण या अतिरिक्त जानकारी के स्रोत के रूप में किसी संगठन या वेबसाइट के उल्लेखों का लेखक या प्रकाशक समर्थन नहीं करता है। यह भी संभव है कि पुस्तक के प्रकाशन के दौरान उद्धृत बेवसाइट हटा दी गयी हो।

इस पुस्तक में उल्लिखित विशेषज्ञ के राय का उपयोग करने का परिणाम लेखक और प्रकाशक के नियंत्रण से हटकर पाठक की परिस्थितियों और कारकों पर पूरी तरह निर्भर करेगा।

पुस्तक में दिये गये विचारों को आजमाने से पूर्व किसी विशेषज्ञ से सलाह लेना आवश्यक है। पाठक पुस्तक को पढ़ने से उत्पन्न कारकों के लिए पाठक स्वयं पूर्ण रूप से जिम्मेदार समझा जायेगा।

उचित मार्गदर्शन के लिए पुस्तक को माता-पिता एवं अभिभावक की निगरानी में पढ़ने की सलाह दी जाती है। इस पुस्तक के खरीददार स्वयं इसमें दिये गये सामग्रियों और जानकारी के उपयोग के लिए सम्पूर्ण जिम्मेदारी स्वीकार करते हैं।

इस पुस्तक की सम्पूर्ण सामग्री का कॉपीराइट लेखक/प्रकाशक के पास रहेगा। कवर डिजाइन, टेक्स्ट या चित्रों का किसी भी प्रकार का उल्लंघन किसी इकाई द्वारा किसी भी रूप में कानूनी कार्रवाई को आमंत्रित करेगा और इसके परिणामों के लिए जिम्मेदार समझा जायेगा।

प्रकाशकीय

वी एण्ड एस पब्लिशर्स पिछले कुछ वर्षों से आत्मविकास, विज्ञान, जनविकास, सामान्य ज्ञान तथा चिकित्सा सम्बन्धी पुस्तकों का प्रकाशन करते आ रहे हैं। इसी कड़ी में जब हमारा ध्यान मातृत्त्व विषय की ओर गया तब हमने बाजार में इस विषय के ऊपर अच्छी पुस्तकों की कमी महसूस करते हुए नारी के लिए एक ज्ञानवर्द्धक एवं उपयोगी पुस्तक प्रकाशित करने का निश्चिय किया। मातृत्त्व का सुख प्राप्त करना प्रत्येक नारी के लिए बड़ा ही सुखद तथा गौरवपूर्ण अनुभव है लेकिन माँ बनने की प्रक्रिया में उसे कई प्रकार की परेशानियों का सामना भी करना पड़ता है। प्रस्तुत पुस्तक मातृत्त्व कला में हमने गर्भावस्था में होने वाले सभी शारीरिक और मानसिक परिवर्तन, उनकी देखभाल, समुचित आहार तथा अन्य कठिनाइयों जैसे- गर्भपात, प्रसव पीड़ा तथा शिशु पालन के दायित्व से जुड़ी सभी जानकारियों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। पुस्तक आवश्यक जगहों पर मातृत्त्व से जुड़ी शारीरिक कार्यप्रणाली को स्पष्ट चित्रों से समझाया गया है। पुस्तक में गर्भावस्था से जुड़ी कुछ भ्रान्तियों के अनुत्तरित समाधान भी दिये गये हैं।

यद्यपि पुस्तक की भाषा सहज और सरल है, फिर भी हमने पुस्तक में लिखे गये क्लिष्ट शब्दों के साथ उसके अंग्रेजी रूपान्तर भी दिये गये हैं। पुस्तक के अंतिम भाग में गर्भवती को शिशु को स्तनपान कराने, बच्चों को रोगों से बचाने के लिए उनकी उचित देखभाल तथा परिवार नियोजन की जानकारी दी गयी है जिन्हें अपनाकर वह अगले बच्चे के जन्म में पर्याप्त अंतर रख सकें।

हमें पूर्ण विश्वास है कि यह पुस्तक सभी महिलाओं को गर्भावस्था एवं प्रसव के उपरान्त उनके देखभाल में उपयोगी सिद्ध होगी। पाठकों को यदि पुस्तक में कोई त्रुटि नजर आये तो हमें अपना बहुमूल्य सुझाव अवश्य भेजें।

आपकी सेवा में सदैव तत्पर!

विषय–सूची

1. मातृत्त्व 7
2. यौन अंगों की कार्य प्रणाली 13
3. गर्भावस्था के लक्षण 48
4. शारीरिक परिवर्तन 62
5. गर्भावस्था में देखभाल/खानपान 72
6. डॉक्टर से परामर्श 96
7. गर्भावस्था की समस्याएँ एवं समाधान 123
8. योगासन एवं व्यायाम 141
9. गर्भावस्था के दौरान सेक्स 148
10. गर्भपात 154
11. प्रसव का समय 174
12. प्रसव के पश्चात् माँ-शिशु की उचित देखभाल 198
13. स्तनपान 220
14. शिशु में होने वाले रोग व उपचार 230
15. नवजात शिशु की मूल आवश्यकताएँ 259
16. बाल-मृत्यु की समस्या 268
17. परिवार नियोजन 270

1

मातृत्त्व

'मातृत्त्व' शब्द बहुत ही विस्तृत और व्यापक अर्थ रखता है। यह एक नारी को पूर्णता प्रदान करता है। मातृत्त्व के अभाव में नारी का जीवन अधूरा है। भारतीय नारी को समाज तथा परिवार में सम्मान दिलाने में मातृत्त्व का बहुत बड़ा योगदान है। जो स्त्री मातृत्त्व को नहीं प्राप्त कर पाती है, उसे परिवार तथा समाज में हेय दृष्टि से देखा जाता है। मातृत्त्व की अपूर्णता के कारण उसका जीवन मंगलमय नहीं माना जाता है, फलस्वरूप मांगलिक कार्यों के लिये ऐसी स्त्री को शुभ नहीं माना जाता है। भारतीय नारी के लिये परिवार व समाज में प्रतिष्ठा पाने के लिये मातृत्त्व जरूरी है। मातृत्त्व को सृष्टि का आधार माना जाता है, क्योंकि इससे प्रजाति में निरंतरता बनी रहती है और समाज का अस्तित्त्व कायम रहता है।

'मातृत्त्व' शब्द में 'माँ' शब्द का समावेश है, जिसका तात्पर्य माता से है अर्थात् 'बच्चे को जन्म देने वाली स्त्री'। लेकिन यह 'माँ' शब्द तभी गरिमायुक्त माना जाता है जब कोई माँ जन्म देने के बाद अपने शिशु का पालन-पोषण उचित रूप से करती है जिससे वह बालक आगे चलकर एक सुयोग्य नागरिक बन सके। वही माँ 'सुजननी' कहलाती है, जो जन्म के उपरांत शिशु पर अपना सर्वस्व न्योछावर कर उसके जीवन को सुखी बनाने का प्रयत्न करती है तथा समाज के सुयोग्य नागरिक के रूप में उसका विकास करती है। अगर मातृत्त्व का अर्थ केवल सन्तानोत्पत्ति ही हो तो एक माँ तथा मादा जानवर में कोई अन्तर नहीं रह जायेगा, क्योंकि एक मादा जानवर भी अपने बच्चे को जन्म देती है। अतः सफल मातृत्त्व का अर्थ 'सुसंतान की प्राप्ति' तथा 'शिशु कल्याण' दोनों है।

मातृकला क्या है? (What is Mothercraft)

मातृकला दो शब्दों से मिलकर बना है मातृ और कला। मातृ से तात्पर्य माता अथवा बच्चे को जन्म देने वाली स्त्री से है। 'मातृ' शब्द के साथ जुड़ा हुआ शब्द 'कला' इसे पूर्णता प्रदान करता है। 'कला' से तात्पर्य माँ की उन सभी योग्यताओं से है जिनके द्वारा वह संतान को जन्म देती है, उसके बाद उसका पालन-पोषण करती है जिससे बालक का सर्वांगीण विकास होता है। शिशु प्रकृति की एक अनमोल कृति है इसलिये इसे सजाना-सँवारना भी माता-पिता का ही उत्तरदायित्व है। शिशु को जन्म देकर ही अपने मातृत्त्व को सफल मान लेना तथा अपने कर्त्तव्य की इतिश्री समझ लेना उचित नहीं है। मातृत्त्व तभी सार्थक माना जाता है। जब संतान सुयोग्य बनकर परिवार एवं समाज दोनों के लिये कल्याणकारी सिद्ध हो।

आदर्श माँ बनने के लिए और संतान की उचित पालन-पोषण और सर्वांगीण विकास के लिये हर गर्भवती को 'मातृकला' एवं 'शिशु पालन' का विधिवत ज्ञान होना जरूरी है। वर्तमान समय में

मातृत्व से बंचित क्यों होती हैं आधुनिक युवतियाँ?

संतानहीनता के कई कारण होते हैं। तकनीकी रूप से देखा जाए तो अंडाणु न बन पाना, फैलोपियन ट्यूब खराब होना, शुक्राणु के विकार तथा अन्य। करीब 15 से 30 प्रतिशत तक में कोई कारण नहीं पता चलता, इसे अनजानी निःसंतान कहते हैं। सर्वाधिक कारणों में शुक्राणुओं का विकार, फैलोपियन ट्यूब का खराब होना देखने में आता है और करीब 10 से 30 प्रतिशत युगलों के संतानहीनता के एक से ज्यादा कारण रहते हैं। इसके अलावा कुपोषण, तनाव, मोटापा, प्रदूषण आदि भी इस समस्या को बढ़ावा देते हैं। आजकल इस समस्या में बढ़ोतरी होती देखी गई है। देर से शादी, बढ़ते हुए यौन रोग, कार्यक्षेत्र में बढ़ता हुआ रसायनिक प्रदूषण और करियर की दौड़ में गर्भाधान को टालना सभी इस बढ़ोतरी में उत्तरदायी हैं।

जब औद्योगिक विकास के परिणामस्वरूप एकाकी परिवारों की वृद्धि अधिक संख्या में हो रही है, इस समय तो गर्भवतियों के लिये इसका ज्ञान होना बहुत जरूरी है जिससे कि वे स्वस्थ शिशु को जन्म दे सकें। पूर्व प्रसव तथा प्रसवकालीन कठिनाइयों से बचने के लिए भी मातृकला का ज्ञान होना आवश्यक है। प्रसव के बाद स्वयं की तथा शिशु की उचित रूप से देखभाल करने तथा विकास की विभिन्न अवस्थाओं में शिशु का सर्वांगीण विकास करने के लिए भी इस कला का ज्ञान होना जरूरी है। मातृ एवं शिशु के मृत्यु के आँकड़ों को देखने से ज्ञात होता है कि अन्य कारणों के साथ-साथ बाल एवं शिशु-मृत्यु का एक कारण 'मातृत्त्व सुरक्षा तथा शिशु-पालन के यथोचित ज्ञान' का अभाव भी है। वर्तमान में इस समस्या के समाधान एवं गर्भवतियों को सुखद मातृत्त्व प्राप्त करने के लिये यह जरूरी है कि उन्हें मातृकला तथा शिशु-पालन की जानकारी दी जाये, जिससे वे गर्भकालीन अवस्था में होने वाले विकास, सुरक्षा, सुरक्षित प्रसव एवं प्रसवोपरांत शिशु की उपयुक्त देखभाल के विषय में सही जानकारी प्राप्त कर सकें। वर्त्तमान समय में बालिकाओं को गृहविज्ञान की शिक्षा देकर मातृकला एवं शिशु पालन से सम्बन्धित बातों की जानकारी प्रदान की जा रही है।

मातृकला का महत्त्व (Importance of Mothercraft)

मातृकला का प्रमुख महत्त्व निम्नलिखित हैं

1. **सुरक्षित प्रसव व शिशु-विकास में उपयोगी** मातृकला की जानकारी से एक माँ को यह जानकारी मिलती है कि सम्पूर्ण गर्भकालीन अवस्था में वह किस प्रकार का भोजन करे, किस प्रकार के वस्त्र पहने, किस तरह के व्यायाम करे, कैसा साहित्य पढ़े आदि, जिससे गर्भ में स्वस्थ शिशु का विकास हो एवं प्रसव के समय किसी भी तरह की कठिनाई उत्पन्न न हो।
2. **यौन शिक्षा प्रदान करना** मातृकला के अध्ययन से बालिकाओं को यौन शिक्षा की जानकारी मिलती है, क्योंकि इसमें स्त्री-पुरुष के प्रजनन अंगों की रचना तथा बालिकाओं में होने वाले शारीरिक परिवर्तनों के विषय में पूरी जानकारी दी गई है।
3. **प्रसव पूर्व, प्रसवकालीन एवं प्रसवोपरांत देखभाल में सहायक** मातृकला के अध्ययन से यह जानकारी मिलती है कि सुरक्षित प्रसव के लिये प्रसव से पूर्व किन सावधानियों की जरूरत होती है, प्रसव के समय किस वस्तुओं की जरूरत होती है जिससे माँ तथा शिशु को किसी प्रकार का संक्रमण न हो एवं वे स्वस्थ रहें। इसी प्रकार प्रसव के बाद माँ तथा शिशु की देखभाल किस प्रकार की जाये, इन सभी बातों की जानकारी भी प्राप्त होती है।
4. **नवजात शिशु के पालन-पोषण का ज्ञान** मातृकला के अध्ययन से शिशु के पालन पोषण के विषय में ज्ञान प्राप्त होता है। शिशु-पालन के अन्तर्गत यह बताया जाता है कि नवजात शिशु

को किस प्रकार दूध पिलाना चाहिये, किस प्रकार उसके शरीर की सफाई करनी चाहिये, किस प्रकार व्यायाम करना चाहिये। स्वास्थ्य रक्षा के लिये कब-कब कौन से टीके लगवाने चाहिये, जिससे शिशु शारीरिक रूप से स्वस्थ रहे। शारीरिक विकास के साथ-साथ मानसिक, सामाजिक तथा संवेगात्मक विकास के लिये किन-किन बातों को ध्यान में रखना चाहिये, इन सभी बातों की जानकारी मातृकला एवं शिशु पालन के अध्ययन से प्राप्त होती है।

5. **बालक एवं बालिकाओं के व्यक्तित्त्व का निर्माण करना** बालक एवं बालिकाओं के सर्वांगीण विकास, चरित्र निर्माण एवं स्वस्थ आदतों के विकास में मातृकला तथा शिशु-पालन का ज्ञान मद्दगार होता है। क्योंकि मातृकला के अध्ययन से बालक एवं बालिकाओं के सामान्य व्यवहारों के विषय में माता-पिता को समझने में सुविधा होती है। अगर उससे बालक व बालिकाओं में कोई अनुचित आदतें अथवा व्यवहार विकसित होते हैं तो वे शीघ्र ही उनका समाधान कर उनमें अच्छी आदतों का विकास कर अच्छे चरित्र का निर्माण करती हैं। इससे बालक एवं बालिकाओं के सर्वांगीण विकास में मदद मिलती है।
6. **शिशु के सामान्य व संक्रामक रोगों के सम्बन्ध में जानकारी देकर, बचाव व उपचार में सहायता पहुँचाना** मातृकला का ज्ञान माता-पिता को यह बताता है कि किन-किन असावधानियों से शिशुओं को कौन-कौन से साधारण व संक्रामक रोग हो सकते हैं, इसके अलावा यह रोगों से बचाव तथा उपचार की जानकारी भी प्रदान करता है जिससे माता-पिता को शिशुओं की रोगों से रक्षा में मद्द मिलती है। रोग न हो इसके लिये कौन से टीके कब लगवाये जायें, इसकी जानकारी भी मातृकला एवं शिशु-पालन के अध्ययन से प्राप्त होती है।
7. **बालिकाओं को भविष्य में अच्छी पत्नी, सफल गृहिणी तथा अच्छी माँ बनने में सहायता करना** मातृकला के अध्ययन से बालिकाओं को विभिन्न विषयों का ज्ञान प्राप्त होता है। जैसे पूर्व प्रसव गर्भकालीन सुरक्षा, प्रसवकालीन तैयारी, सुरक्षित प्रसव के उपाय, नवजात शिशु की देखभाल, नवजात शिशु का भोजन, वस्त्र, व्यायाम, स्वास्थ्य रक्षा आदि। इन सभी बातों की जानकारी से एक बालिका भविष्य में अच्छी माँ और सुगृहिणी बन सकती है।
8. **माँ तथा शिशु की मृत्यु की समस्या के समाधान में सहायक** वर्त्तमान समय में भारतवर्ष में मातृ एवं शिशु-मृत्यु की समस्या विकराल रूप धारण कर चुकी है। यों तो इसके कई कारण हैं लेकिन उनमें से एक मातृकला का ज्ञान न होना भी है। मरने वाली स्त्रियों में ज्यादातर प्रसव के दौरान मर जाती हैं। इसी प्रकार शिशु-मृत्यु में भी उन बच्चों का प्रतिशत अधिक है, जिनकी गर्भावस्था में या जन्म के समय या जन्म के पश्चात् दो वर्ष के अन्दर ही मृत्यु हो जाती है। इस समस्या के समाधान में मातृकला एवं शिशु-पालन का ज्ञान मद्दगार हो सकता है, क्योंकि

मातृत्व सुख प्राप्त करने वाली महिलाओं को दें स्तनपान की जानकारी?

जो महिलाएँ पहली बार शिशु को जन्म देती हैं, उन्हें स्तनपान सम्बन्धी प्रमुख जानकारी पहले ही दे देनी चाहिए। जन्म के पश्चात बच्चे को सर्वप्रथम स्तनपान की ही आवश्यकता होती है। ज्यादातर महिलाओं को गर्भधारण से पहले ही ये ज्ञान होता है कि उन्हें अपने शिशुओं को स्तनपालन कराना होगा, अतः जन्म पूर्व कक्षाओं में, दैनिक प्रगति एवं प्रारंभिक स्तनपान के व्यवस्थापन के सम्बन्ध में बातचीत का समय लेना चाहिये।

मातृकला का ज्ञान उन सभी बातों की जानकारी देता है जिससे सम्पूर्ण गर्भकाल में माँ शारीरिक रूप से स्वस्थ रहे तथा गर्भ की सुरक्षा कर सके। सुरक्षित तथा सामान्य प्रसव के लिये आवश्यक जानकारी भी मातृकला के द्वारा दी जाती है। जन्म के बाद शिशु का किस प्रकार पालन-पोषण करें जिससे की वह समाज के सुयोग्य नागरिक एवं सुसंतान का दायित्व निर्वाह कर सके, इसकी जानकारी भी मातृकला के द्वारा दी जाती है।

9. **परिवार नियोजन को सफल बनाने में सहायक** मातृकला के ज्ञान से अप्रत्यक्ष रूप से परिवार नियोजन कार्यक्रम का प्रचार-प्रसार होता है। मातृकला का अध्ययन यह बताता है कि सुसंतान की प्राप्ति किस प्रकार करें। अगर माता-पिता में संतानोत्पत्ति के लिये सभी प्रकार की योग्यतायें नहीं हैं तो गर्भधारण न करें और तब तक के लिये कृत्रिम साधनों को अपनाकर परिवार नियोजित करें। प्राकृतिक रूप से भी किस प्रकार संयम द्वारा गर्भाधान को स्थगित किया जाता है, इस बात की भी जानकारी मातृकला के ज्ञान से होती है। इसके अलावा परिवार नियोजन के सभी कृत्रिम उपायों की जानकारी देकर लोगों के मन में परिवार नियोजन के प्रति विकसित गलत धारणाओं को दूर करने में भी यह सहायक है। मातृकला का अध्ययन इस बात की जानकारी देता है कि संतान को ईश्वरीय देन न मानें, बल्कि जब आप चाहेंगे तभी संतान की प्राप्ति कर सकते हैं।

10. **कुप्रथाओं और अंधविश्वासों को समाप्त करने में सहायक** मातृकला का ज्ञान मातृत्त्व एवं शिशु-पालन से सम्बन्धित नाना प्रकार के अंधविश्वासों तथा सामाजिक कुप्रथाओं को खत्म करने में सहायक है जैसे संतानहीन स्त्री को अमंगलकारी मानना, गर्भकालीन कष्टों और समस्याओं का सामान्य प्रक्रिया मानकर उनका उपचार न करना, प्रसव के समय तथा प्रसव के बाद एक माह तक गर्भवती माँ को अछूत मानकर पहनने तथा ओढ़ने बिछाने के लिये गंदे व पुराने वस्त्रों को देना, घर पर प्रसव कराना, भूत-प्रेत और हवा के डर से माँ तथा नवजात शिशु को एक माह तक अंधेरे तथा बंद कमरे में रखना, रोग होने पर घर में झाड़-फूँक कराना, संतान को ईश्वर की देन मानकर परिवार नियोजन के तरीकों को न अपनाना, गर्भवती स्त्री के भोजन पर ध्यान न देना आदि समस्याओं तथा कुप्रथाओं का निराकरण करने में मातृकला एवं शिशु-पालन का ज्ञान सहायक होता है।

11. **शिशुओं के सर्वांगीण विकास में सहायक** मातृकला का ज्ञान न केवल संतान की उत्पत्ति के तरीके ही बताता है बल्कि यह माता-पिता को आवश्यक निर्देश भी देता है कि वे किस प्रकार अपने बच्चे का पालन-पोषण करें जिससे वह समाज तथा राष्ट्र के सुयोग्य नागरिक के रूप में विकसित होकर समाज तथा राष्ट्र की प्रगति में अपना योगदान दें।

12. **स्वस्थ मातृत्त्व पाने में सहायता** मातृकला के अध्ययन से एक स्त्री को यह जानकारी मिलती है कि सफल मातृत्त्व के लिये कौन-कौन सी योग्यतायें जरूरी हैं। नये जीव के विकास के लिये माँ में ही नहीं बल्कि पिता में भी जैविकीय योग्यतायें होना आवश्यक है। अगर कोई स्त्री माँ नहीं बन पाती है तो इसका कारण पुरुष की शारीरिक कमी भी हो सकती है। इसके अलावा आर्थिक तथा मनोवैज्ञानिक योग्यता भी स्वस्थ मातृत्त्व का एक भाग है। अगर स्त्री तथा पुरुष नये जीव को किसी कारणवश स्वीकार करने में असमर्थ हैं अथवा आर्थिक रूप से कमजोर होने कारण वे शिशु के पालन-पोषण में असमर्थ हैं तो इसका दुष्प्रभाव शिशु-विकास पर पड़ता है। अतः सफल मातृत्त्व के लिये आवश्यक योग्यताओं की जानकारी मातृकला के अध्ययन करने से ही प्राप्त होती है।

मातृकला का क्षेत्र (Scope of Mothercraft)

मातृकला का क्षेत्र निम्नलिखित पहलुओं के तहत निर्धारित किया जा सकता है

1. **गर्भकालीन समस्याओं तथा उनके उपचार का अध्ययन** सामान्य रूप से गर्भकालीन कष्ट तथा समस्यायें गर्भावस्था के प्राकृतिक लक्षण हैं, जिनसे भयभीत होने की जरूरत नहीं बच्चों के पालन-पोषण करने है, मात्र कुछ सावधानियाँ अपेक्षित रहती हैं। मातृकला तथा बच्चे के पालन सम्बन्धी अध्ययन इन सभी समस्याओं एवं कष्टों की जानकारी देता है, साथ ही उनके निराकरण के विषय में भी बताता है। इसके अध्ययन से गर्भवती स्त्री मानसिक रूप से परेशान नहीं होती है तथा गर्भकालीन अवस्था को सामान्य प्रक्रिया मानती है।
2. **प्रसव पूर्व तैयारी का ज्ञान** मातृकला के अन्तर्गत प्रसव पूर्व की तैयारी यथा प्रसव के लिये जरूरी सामान, उचित डॉक्टर का चुनाव, प्रसव के लिये उचित स्थान का चुनाव, गर्भवती स्त्री एवं नवजात शिशु के लिये वस्त्रों का चुनाव आदि बातों का अध्ययन किया जाता है जिससे प्रसव के समय सुविधा रहती है।
3. **प्रसव प्रक्रिया और नवजात शिशु एवं प्रसूता की देखभाल का ज्ञान** मातृकला के तहत प्रसव प्रक्रिया, प्रसव पूर्व लक्षण और शिशु जन्म के पश्चात् नवजात शिशु तथा प्रसूता की देखभाल के विषय में अध्ययन किया जाता है।
4. **शिशुओं के पालन-पोषण के विभिन्न पहलुओं का ज्ञान** मातृकला शिशुओं के सर्वांगीण विकास के लिये, बाल विकास के विभिन्न पहलुओं का ज्ञान प्रदान करता है। इसके अध्ययन से बाल विकास के मूलभूत आवश्यकताओं तथा उनकी पूर्ति के विषय में ज्ञान प्राप्त होता है जिससे शिशुओं के सर्वांगीण विकास में मदद मिलती है।
5. **बाल-पोषण का ज्ञान** मातृकला के अन्तर्गत बाल-पोषण की विभिन्न विधियों की की जानकारी दी जाती है। उदाहरण के लिए दूध पिलाना, वस्त्र, स्वच्छता आदि। इस विद्या से बाल-पोषण में मदद मिलती है, जिससे शिशु का सर्वांगीण विकास सम्भव हो सके।
6. **शिशुओं में होने वाले सामान्य तथा संक्रामक रोगों का अध्ययन** मातृकला के अन्तर्गत बाल्याकाल में होने वाले विभिन्न प्रकार के सामान्य रोगों के लक्षणों, कारणों एवं उपचार के विषय में ज्ञान प्राप्त किया जाता है। इसके अलावा मातृकला के तहत स्वास्थ्य रक्षा के लिये टीकाकरण के विषय में भी जानकारी मिलती है, जिससे शिशुओं को संक्रामक रोगों से बचाने तथा उन्हें स्वस्थ रखने में मदद मिलती है।
7. **मातृ-शिशु समस्या का ज्ञान** मातृकला के तहत बढ़ती हुई मातृ-शिशु समस्या के कारणों तथा समाधान पर प्रकाश डाला जाता है। इसके ज्ञान से माता-पिता जागरूक होकर स्वयं इस समस्या के समाधान में सहयोग प्रदान कर सकते हैं।
8. **बाल-विकास के विभिन्न पहलुओं का ज्ञान** मातृकला के तहत बाल-विकास के विभिन्न पहलुओं का ज्ञान प्राप्त किया जाता है, यथा शारीरिक, मानसिक, और संवेगात्मक विकास आदि। इससे शिशुओं के सर्वांगीण विकास में मदद मिलती है।
9. **बाल-विकास की असामान्यताओं का ज्ञान** मातृकला के तहत बाल-विकास के विभिन्न क्षेत्रों में होने वाले शारीरिक व मानसिक दोषों, अस्वस्थ आदतों, व्यवहारात्मक समस्याओं, बाल अपराध एवं उनके कारण व निराकरण का अध्ययन किया जाता है। इससे माता-पिता को असामान्य बालक एवं बालिकाओं के पालन-पोषण में भी मदद मिलती है।

10. **परिवार कल्याण कार्यक्रम का ज्ञान** मातृकला के तहत परिवार कल्याण की दृष्टि से परिवार नियोजन की उपयोगिता, परिवार को नियोजित करने का तरीका एवं परिवार कल्याण कार्यक्रम में संलग्न विभिन्न संस्थाओं तथा उनके क्रिया-कलापों का अध्ययन किया जाता है।
11. **मातृत्त्व के लिये जरूरी बातों का ज्ञान** मातृकला के अन्तर्गत गर्भधारण करने से पूर्व जरूरी आवश्यकताओं का अध्ययन किया जाता है, जिससे उन्हें संतान के पालन-पोषण में मदद मिलती है।
12. **प्रजनन तंत्र का ज्ञान** मातृकला के अन्तर्गत स्त्री और पुरुष के प्रजनन तंत्र की रचना एवं कार्यों की जानकारी मिलती है, जिससे गर्भाधान प्रक्रिया एवं यौन सम्बन्धों को सरलता से समझा जा सकता है।
13. **शिशु के गर्भकालीन विकास का ज्ञान** मातृकला के तहत स्त्री और पुरुष के शारीरिक सम्बन्धों से सम्पन्न होने वाली 'गर्भाधान प्रक्रिया' और गर्भ में शिशु के विकास की सम्पूर्ण प्रक्रिया का अध्ययन किया जाता है जिससे गर्भकाल को सुरक्षित रखने में सहायता प्राप्त होती है। इसके अलावा गर्भावस्था के लक्षण एवं गर्भकालीन समस्याओं का अध्ययन किया जाता है।
14. **गर्भकालीन सुरक्षा का ज्ञान** मातृकला के तहत इस बात का अध्ययन किया जाता है कि शिशु के समुचित विकास के लिये सम्पूर्ण गर्भकालीन अवस्था में कौन-कौन सी सावधानियाँ अपेक्षित हैं। उदाहरण के लिए गर्भवती स्त्री का भोजन, व्यायाम, निद्रा, स्वास्थ्य परीक्षण और मानसिक स्वास्थ्य आदि। इन सभी बातों के अध्ययन से गर्भवती को शारीरिक तथा मानसिक रूप से स्वस्थ रखकर स्वस्थ शिशु को जन्म देने में मदद मिलती है।

2

यौन अंगों की कार्य प्रणाली

प्रकृति में विद्यमान सभी जीव अपने ही समान जीवों को जन्म देते हैं, इस प्रक्रिया को प्रजनन कहा जाता है। इस तरह प्रजनन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा जीव अपने समान शिशु को जन्म देकर अपनी वंश परम्परा को कायम रखता है। प्रकृति के महत्त्वपूर्ण कार्यों में से प्रजनन भी एक महत्त्वपूर्ण कार्य है। प्रजनन के लिए प्रकृति ने हर विकसित जीव-जन्तु में नर एवं मादा जाति उत्पन्न की है तथा उनमें ऐसे अंग बनाए हैं जिनकी सहायता से उनमें माता-पिता के समान ही भ्रूण उत्पन्न होते हैं। मैथुन की क्रिया से नर किसी मादा के शारीरिक सम्बन्ध स्थापित कर उसके शरीर में गर्भ ठहराते हैं, जिससे नए जीव की सृष्टि आरंभ होती है। स्त्री तत्त्व एवं पुरुष तत्त्व को उत्पन्न करने वाले मुख्य अंग स्त्री में डिम्ब ग्रन्थि और पुरुष में अण्ड ग्रन्थि होते हैं। अण्ड ग्रन्थियों को वृषण के नाम से भी जाना जाता है।

नर प्रजनन अंग (Male Reproduction)

सामान्य रूप से पुरुषों के जनन तंत्र में बाहरी और आन्तरिक ढाँचा होता है। बाहरी ढाँचे में लिंग और पुरुषों के अण्डकोश होते हैं। आन्तरिक ढांचे में अण्डग्रन्थि, शुक्रवाहिका, प्रोस्टेट, एपिडिडाइमस और शुक्राशय होता है।

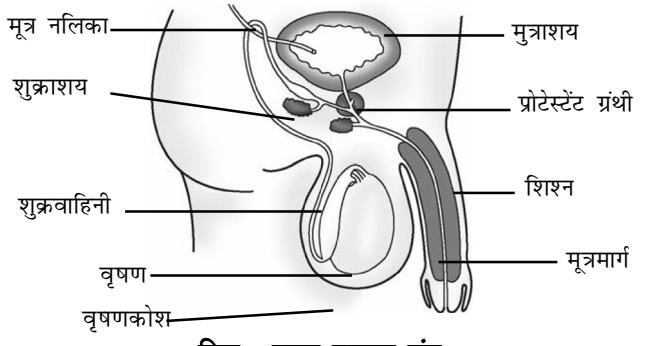

चित्र : पुरुष प्रजनन तंत्र

बाहरी ढाँचे के मुख्य लक्षण लिंग पुरुष अंग है जिसका उपयोग मूत्रत्याग एवं सम्भोग के लिए किया जाता है। यह लचीले टिशू और रक्तवाहिकाओं से बना है। अण्डकोश लिंग के दोनों ओर स्थित बाहरी थैलियों की एक जोड़ी होती है जिसमें अण्डग्रन्थि होती है।

आन्तरिक ढाँचे के मुख्य लक्षण आन्तरिक ढाँचे में अण्डग्रन्थि, शुक्रवाहिका, एपिडिडाइमस और शुक्राशय होता है। अण्डग्रन्थि में वीर्य और टैस्टोस्ट्रोन नामक हॉरमोन उत्पन्न होते हैं। पूर्ण परिपक्वता प्राप्त करने तक वीर्य एपिडाइमस में संचित रहता है।

नर प्रजनन अंग के दो मुख्य भाग हैं–

1. वृषण कोश और
2. शिश्न।

शुक्रवाहिका वे नलियाँ हैं, जो वीर्य को शुक्राशय तक ले जाती हैं जहाँ पर लिंग द्वार से बाहर निष्कासित करने से पहले वीर्य को संचित किया जाता है। प्रोस्टेट पुरुषों की यौन ग्रन्थि होती है। यह लगभग एक अखरोट के माप का होता है, जो कि ब्लैडर और युरेथरा के गले को घेरे रहता है युरेथरा वह नली है, जो ब्लैडर से मूत्र ले जाती है। प्रोस्टेट ग्रन्थि से हल्का सा खारा तरल पदार्थ निकलता है, जिस तरल पदार्थ में शुक्राणु रहता है।

वृषण कोष (Testis Sac)

इसमें दो वृषण अथवा अण्डग्रन्थियाँ होती हैं। ये दोनों वृषण शिश्न की जड़ के नीचे रहते हैं। वृषण से एक नली उदर गुहा की ओर जाती है, जिसे शुक्रवाहिका कहते हैं। इसी के द्वारा वीर्य बाहर आता है। शुक्र वाहिनी दो विशेष थैलियों में जाकर मिलती है, जिन्हें शुक्राशय के नाम से जाना जाता है। इन थैलियों के ऊपर मूत्राशय स्थित रहता है तथा मूत्रमार्ग इन थैलियों के मध्य में से निकलता है। इन दो थैलियों से जो पतली नली निकलती है, वह मूत्रमार्ग के साथ मिल जाती है। इस नली को स्खलनीय नलिका भी कहते हैं। इस नली के आस-पास दो ग्रन्थियाँ स्थित होती हैं, जिन्हें प्रोस्टेट ग्रन्थियाँ कहते हैं। ये लट्टू के आकार की ग्रन्थि होती हैं जो मूत्राशय के नीचे स्थित होती हैं। इससे निकलने वाला रस कई पतली नलिकाओं द्वारा स्खलनीय नली में आकर वीर्य के साथ मिश्रित हो जाता है। प्रोस्टेट ग्रन्थि के नीचे मूत्रमार्ग के दोनों ओर मटर के दाने के आकार की दो ग्रन्थियाँ होती है जिसका रंग पीला होता है। इसमें एक विशेष प्रकार का रस बनता है। यह रस पतली नलिकाओं द्वारा प्रवाहित होकर वीर्य के साथ मिल जाता है।

चित्र : वृषण कोष की आंतरिक

वीर्य वृषणों में बनने वाला एक विशेष प्रकार का तरल पदार्थ है। इसमें लाखों शुक्राणु

होते हैं। शुक्राणु अत्यन्त सूक्ष्म होते हैं, जिन्हें सूक्ष्मदर्शी यन्त्र द्वारा देखा जा सकता है। इनका निर्माण वृषणों में ही होता है। निर्माण के बाद शुक्राणु शुक्रवाहिनी के द्वारा शुक्राशय में जमा हो जाते हैं, जो स्खलनीय नलिका द्वारा बाहर निकलता है। इस प्रकार नर में मूत्र एवं वीर्य के निष्कासन का एक ही रास्ता होता है। प्रोस्टेट ग्रन्थि का रस वीर्य के गाढ़ेपन को कम करके उसे तरल बनाता है। यह रस वीर्य को रंग भी देता है।

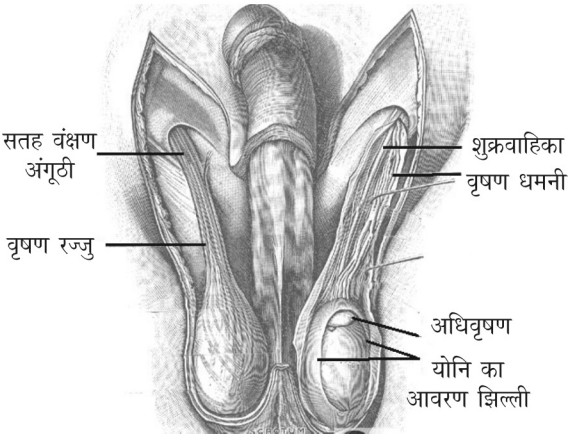

वृषण की सरंचना

वृषण में कई पतली मुड़ी हुई नलिकाएँ एक विशेष प्रकार के संयोजक तन्तुओं के द्वारा जुड़ी रहती हैं। इनको सेमिनिफेरस अथवा शुक्रजनक प्रणालिकाएँ के नाम से जाना जाता है। ये गुच्छों के रूप में भरी रहती हैं। सारी ग्रन्थि में लगभग 1,000 नलिकाएँ होती हैं जिनकी लम्बाई 35 सेमी. से 70 सेमी. तक होती है। इन्हें खोलकर बिछाने से 800 मीटर से अधिक लम्बी लाइन बन जायेगी। ये नलिकाएँ ऊपर की ओर जाकर एक मोटा-सा उपाण्ड (Epididymis) बना देती हैं। यह वृषण के नीचे की ओर मुड़ती हैं तथा इसका व्यास शनैः-शनैः कम होने लगता है। यह उदर के भीतर पहुँचकर शुक्राशय में प्रवेश करती है। इस नलिका को शुक्रवाहिनी कहते हैं।

वृषण के भीतर कोष्ठों में स्थित सूक्ष्म नलिकाएँ ही शुक्राणुओं को पैदा करती हैं। इन सूक्ष्म नलिकाओं में दो तरह की कोशिकाएँ पाई जाती हैं एक गोल अथवा घनाकार और दूसरी स्तंभकार। गोल कोशिकाएँ शुक्राणुओं की उत्पत्ति करती हैं, दूसरी दण्डाकार कोशिकाएँ केवल आश्रय देते हैं। गोल कोशिकाओं को सरटोली कोशिका भी कहते हैं। ये विशेष प्रकार के विकास क्रम द्वारा शुक्राणु में बदल जाती हैं, अतः इन्हें शुक्रोत्पादक कोष भी कहते हैं। दण्डाकार कोशिकाओं की लम्बाई 11 मिली. होती है, जिन्हें स्पर्मटोनिया कहते हैं।

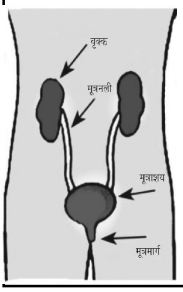

जानें अण्डग्रन्थि से सम्बन्धित समस्याएँ

अण्डग्रन्थि के क्षेत्र में पीड़ा के सामान्य कारण

पीड़ा के सामान्य कारण हो सकते हैं

1. घाव
2. अण्डग्रन्थि में ऐंठन
3. अण्डग्रन्थि में कैंसर।

अण्डग्रन्थि का ऐंठन

यह वह स्थिति है जब कि वीर्य नली जिस सहारा देने वाली नली से अण्डग्रन्थि जुड़ी होती है, उसी पर वे मुड़ जाती है जिससे कि अण्डग्रन्थि में रक्त की आपूर्ति कट जाती है। ऐसे में अण्डकोश नीलवर्ण से बैंगनी रंग में बदल जाता है और बहुत पीड़ा देता है। यह रोग की आपातस्थिति है, ऐसी स्थिति उत्पन्न होने पर एक दम बताना चाहिए।

अण्डग्रन्थि में कैंसर का खतरा पैदा करने वाली चीजें

अण्डग्रन्थि में कैंसर की सम्भावना बढ़ जाती है। इनमें जन्मजात समस्या जैसे कि नीचे न होने वाली अण्डग्रन्थि का पारिवारिक इतिहास, अण्डकोश में चोट लगने का इतिहास शामिल हैं।

अण्डग्रन्थि में कैंसर के सम्भावित प्रारम्भिक संकेत

प्रारम्भिक स्थिति में हो सकता है कि कोई संकेत न मिले क्योंकि इसमें दर्द नहीं होता। कई रोगी उसे हानिविहीन भी समझ सकते हैं और अपने फिजिशियन का ध्यान उधर ले जाने में देर कर देते हैं। लक्षणों में शामिल हैं (1) अण्डग्रन्थि मे छोटा, दर्द विहीव लम्प, (2) अण्डग्रन्थि का बढ़ना (3) अण्डग्रन्थि में भारीपन (4) अण्डग्रन्थि में पीड़ा (5) अण्डग्रन्थि की अनुभूति में बदलाव (6) पुरुष की छातियों और निप्पलों का बढ़ जाना (7) अण्डकोश में अचानक तरल पदार्थ या रक्त का भर जाना।

वृषण के कार्य

वृषण के दो मुख्य कार्य होते हैं (1) शुक्राणुओं का निर्माण तथा (2) पुरुष हार्मोन का उत्पादन।

(1) शुक्राणुओं का निर्माण सबसे पहले विशेष तरह के कोष के रूप में शुक्राणु पैदा होते हैं जिसको स्पर्मेटोसाइट कहते हैं। यह दो भागों में विभाजित होता है जिन्हें स्पर्मेटिड्स कहते हैं। प्रत्येक स्पर्मेटिड में 24 गुणसूत्र पाए जाते हैं। इसमें अपचयात्मक विभाजन होता है। प्रत्येक स्पस्पर्मेटिड एक स्वतन्त्र शुक्राणु में परिवर्तित हो जाता है। कुछ स्पर्मेटिड में ल गुणसूत्र तथा कुछ में ग गुणसूत्र पाए जाते हैं। लगभग एक क्यूबिक सेण्टीमीटर वीर्य में छः करोड़ शुक्राणु होते हैं।

शुक्राणु बहुत ही सूक्ष्म होते हैं। इनका आकार पतला, लम्बा और सर्पाकार होता है। इसका आगे का भाग सिर कहलाता है, जो आगे से नुकीला होता है तथा जिसके चारों ओर जीवद्रव्य की एक पतली परत रहती है। सिर के पीछे का भाग ग्रीवा कहलाता है। उसके बाद एक लम्बी पूँछ होती है जिसकी सहायता से शुक्राणु द्रव में तैरता रहता है तथा आगे की ओर गतिशील रहता है। सिर इसका महत्त्वपूर्ण भाग है, जो संयोग के समय अण्डक के भीतर प्रविष्ट हो जाता है। शुक्राणु की लम्बाई 1/10 मिली मीटर होती है।

(2) पुरुष हार्मोन का उत्पादन टेस्टोस्टीरोन का उर्त्सजन वृषण से होता है। यह स्टीराइड समूह के अन्तर्गत आता है। एक दूसरे प्रकार का हार्मोन भी जिसे एण्ड्रो स्टीरोन कहते हैं, वृषण से निकलता है। ये हार्मोन पुरुषत्त्व को बनाए रखने में मददगार होता है। पीयूष ग्रन्थियों से निकलने वाला पुटिका उत्तेजक हार्मोन भी वृषण पर प्रभाव डालता है। यह शुक्रोत्पादक कोशों पर क्रिया करके उसके विकास में मदद करता है। पीयूष ग्रन्थि को निकाल देने पर वृषण सूखकर छोटे-छोटे हो जाते हैं।

शुक्राशय

यह मूत्राशय के पीछे स्थित होता है। ये दो फुले हुए कोश होते हैं। इनकी लम्बाई लगभग 5 सेमी. होती है। इनमें शुक्र प्रणाली आकर खुलती है और इनसे एक नलिका प्रोस्टेट ग्रन्थि में होकर मूत्र मार्ग में पहुँचती है और स्त्री के गर्भाशय के द्वार पर पहुँच जाता है।

शिश्न (Penis)

यह पुरुष का वह प्रजनन अंग है, जो संभोग क्रिया में भाग लेता है। जब पुरुष को यौन उत्तेजना होती है तो उसके शिश्न की नसों मे खून भर जाता है। शिश्न बड़े आकार का होकर सख्त और कड़ा हो जाता है। उत्तेजना की चरम स्थिति में वीर्यपात हो सकता है और यदि इस दौरान पुरुष का शुक्राणु, स्त्री के अंडाणु से मिल जाता है तो स्त्री गर्भवती हो जाती है।

यह मैथुन का भाग है, जिसे तीन भागों में बांटा जा सकता है। शिश्न का आकार लम्बे दण्डों के समान होता है तथा इसके मूल से अग्रभाग तक चले जाते हैं। इन्हें दण्डिकाएँ भी कहा जाता है। दो दण्डिकाएँ पास-पास स्थित होते हैं जिन्हें शिश्न रक्तधर काय के नाम से जाना जाता है। तीसरी दण्डिका से होकर मूत्रमार्ग, मूत्राशय से निकलकर शिश्न के अन्त तक चला आता है जिसे शिश्न मूत्रकर काय कहते हैं।

ये दण्डिकाएँ उच्छायी ऊतकों की बनी होती हैं। इन ऊतकों के मध्य में रिक्त स्थान भी होता है जो कोशिकाओं तथा सूक्ष्म धमनियों से घिरे रहते हैं। इनमें रक्त भरा रहता है, जो संकुचित होकर शिरा का मुँह बन्द कर देती है। इस प्रकार की सरंचना के कारण ही शिश्न का उच्छयन होता है अर्थात् उच्छयन के समय कोशिकाओं से अधिक रस आने लगता है तथा रिक्त स्थानों में भर जाता है जबकि शिरा का मुँह बन्द होने के कारण रक्त बाहर नहीं निकल पाता है। इससे शिश्न फूलकर कड़ा हो जाता है। उच्छयन की क्रिया नाड़ियों द्वारा भी नियन्त्रित रहती है। अनुकम्पी नाड़ियों में से होकर जो श्रोणि नाड़ी के द्वारा आते हैं, वे उत्तेजना होने पर रक्त के प्रवाह की गति को तीव्र करती है। मैथुन की क्रिया की समाप्ति पर परानुकम्पी नाड़ियों के आदेश से शिरा का मुँह खुलता है, रक्त बाहर निकल जाता है जिससे शिश्न पुनः ढीला हो जाता है।

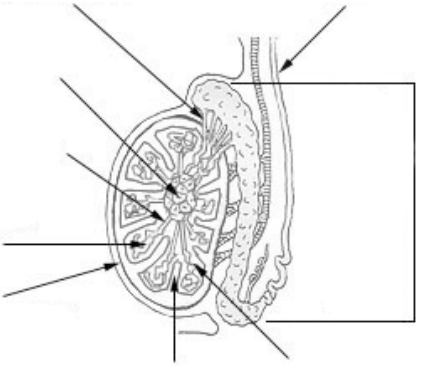

वीर्य

वीर्य वह द्रव्य है जिसमें शुक्राणु तैरते हैं तथा पोषण प्राप्त करते हैं। वीर्य श्वेत रंग का गाढ़ा लसदार पदार्थ है जो पुरुष के मूत्र मार्ग से निकलता है। इसका मुख्य अवयव शुक्राणु है। इसमें कई द्रव्य मिले रहते हैं। शुक्राशय में भी एक द्रव निकल कर वीर्य के साथ मिल जाता है। यह द्रव शुक्राणुओं के जीवन के लिए जरूरी है। शिश्न का प्रमुख कार्य मूत्र तथा वीर्य का निष्कासन है। वीर्यपात के दौरान वीर्य शुक्राणुओं के साथ पुरुष के शिश्न से बाहर निकलते हैं।

पेशाब की नली

यह वह नलिका है, जो मुत्राशय से शुरू होकर शिश्न के अग्र-भाग से एक छिद्र के माध्यम से बाहर निकालता है। इस नलिका के द्वारा यह ध्यान देने वाली बात है कि पेशाब और वीर्य दोनों एक साथ बाहर नहीं निकल सकते।

गीले सपने क्या होते हैं?

सोते समय लिंग से वीर्य का अनियन्त्रित रूप से निकल जाना गीला सपना कहलाता है। इस तरल पदार्थ का रंग क्रीम जैसा या रंगविहीन होता है। सपनों में यौन उत्तेजना होने पर या कम्बल, पलंग अथवा भरे हुए मूत्राशय से रगड़ लगने पर शारीरिक उत्तेजना से गीले सपने आते हैं। किशोरावस्था में शरीर में होने वाले बहुत से परिवर्तनों में गीले सपने को होना भी स्वाभाविक हैं। यदि किसी को गीले सपने न आते हों तो इसका यह अर्थ नहीं कि कुछ गलत है।

स्त्री प्रजनन अंग (Female Reproduction)

औरतों के जनन तंत्र में बाहरी (जननेन्द्रिय) और आन्तरिक ढाँचा होता है। बाहरी ढाँचे में मूत्राशय (वल्वा) और योनि होती है। आन्तरिक ढाँचे में गर्भाशय, अण्डाशय और ग्रीवा होती है।

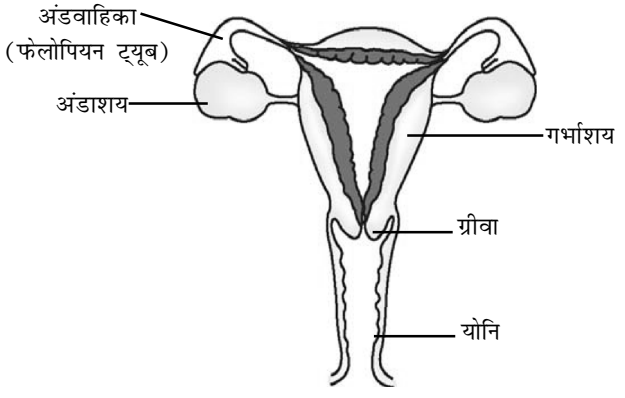

चित्र : मादा जनन तंत्र

बाहरी ढाँचे के मुख्य लक्षण बाहरी ढाँचे में मूत्राशय (वल्वा) और योनि होती है। मूत्राशय (वल्वा) बाहर से दिखाई देने वाला अंश है जबकि योनि एक मांसल नली है जो कि गर्भाशय और ग्रीवा को शरीर के बाहरी भाग से जोड़ती है। योनि से ही मासिक धर्म का रक्त-स्राव होता है और यौनपरक सम्भोग के काम आती है, जिससे बच्चे का जन्म होता है।

आन्तरिक ढाँचे के मुख्य लक्षण आन्तरिक ढाँचे में गर्भाशय, अण्डाशय और ग्रीवा होता है। गर्भाशय जिसे सामान्यतः कोख भी कहा जाता है, उदर के निचले भाग में स्थित खोखला मांसल अवयव है। गर्भाशय का मुख्य कार्य जन्म से पूर्व बढ़ते बच्चे का पोषण करना है। ग्रीवा गर्भाशय का निचला किनारा है। यह योनि के ऊपर स्थित होता है और लगभग एक इंच लम्बा होता है। ग्रीवा से रजोधर्म का रक्तस्राव होता है और जन्म के समय बच्चे के बाहर आने का यह मार्ग है। यह वीर्य के लिए योनि से अण्डाशय की ओर ऊपर जाने का रास्ता भी है। अण्डाशय वह अवयव है जिसमें अण्डा उत्पन्न होता है, यह गर्भाशय की नली के अन्त में स्थित रहता है।

स्त्री प्रजनन अंगों को दो भागों में बाँटा गया है—

बाह्य प्रजनन अंग और आन्तरिक प्रजनन अंग।

1. बाह्य प्रजनन अंग
   - क. मुख्य ओष्ठ,
   - ख. लघु ओष्ठ,
   - ग. योनिद्वार,
   - घ. भगशेफ एवं
   - ङ. हाइमन।
2. आन्तरिक प्रजनन अंग
   - क. योनि,
   - ख. गर्भाशय,
   - ग. अण्ड वाहिनियाँ एवं
   - घ. अण्डाशय।

बाह्य प्रजनन अंग

मुख्य ओष्ठ

मुख्य ओष्ठ दो परतों की बनी होती है। इनके संयोजक तन्तु एवं वसीय तन्तुओं में स्वेद ग्रन्थियाँ पाई जाती हैं। पुरुषों में पाए जाने वाले वृषण कोश के जैसा ही ये तहें कार्य करती हैं। ये सब एक पतली त्वचा से आच्छादित रहती हैं। मुख्य ओष्ठ में रोम नहीं पाए जाते हैं बल्कि रोम बाहर की ओर ही पैदा होते हैं।

लघु ओष्ठ

लघु ओष्ठ त्वचा की चपटी तह है जिसमें संयोजक तन्तु अधिक तथा वसीय तन्तु नहीं के बराबर पाए जाते हैं। लघु ओष्ठ पीछे की ओर जाकर जुड़ते हैं। लघु ओष्ठ एक पतले परदे की मदद से जुड़े रहते हैं, जिसे फोरशेट कहते हैं। यह प्रथम प्रसव के समय टूट जाता है। इनका कार्य योनिद्वार की रक्षा करना है।

योनिद्वार

लघु ओष्ठ के मध्य के स्थान को प्रघाण (Vestibute) कहते हैं जिसमें बाह्य मूत्र मार्ग एवं योनिद्वार पाए जाते हैं। योनिद्वार शिश्न के प्रवेश, मासिक स्राव के निष्कासन एवं प्रसव के लिए जरूरी है।

भगशेफ

प्रघाण के ऊपर के भाग में भगशेफ पाया जाता है जिसमें उच्छायी तन्तु पाए जाते हैं। पुरुष के जैसा स्त्रियों में भी बार्थोलीन ग्रन्थियाँ पाई जाती हैं। इनमें से एक विशेष प्रकार का श्लेष्मिक स्राव होता है। भगशेफ में नाड़ियों का जाल होता है, जो संभोग के समय उत्तेजना पैदा करता है जिससे श्लेष्मिक स्राव की मात्रा बढ़ती है।

हाइमेन

योनिद्वार पर हाइमेन पाया जाता है। यह एक पतला महीन परदा होता है।

वल्वल पीड़ा और कष्ट

वल्वल क्षेत्र में पीड़ा, खुजली, जलन एवं उत्तेजना का कारण जननेन्द्रिय में संक्रमण (इनफैक्शन) हो सकता है या डरमैटईटिस, एक्जीमा जैसी त्वचा के असंक्रामक रोग हो सकते हैं।

त्वचा के असंक्रामक रोग जो कि वल्वल को पीड़ा या कष्ट देते हैं, उनके कारण होते हैं

औरत की वल्वा में त्वचा परक ऐसा रोग भी हो सकता है, जो कि संक्रामक नहीं होता और सम्भोग के साथी को नहीं लगाता। जांघिए को धोने के लिए जो साबुन, दुर्गन्धनाशक और प्रक्षालक काम में लाया जाता है उससे जलन की बहुत सम्भावना रहती है।

वल्वा की त्वचा के रोगों का उपचार

उपचार के लिए सामान्यतः ऐसी स्टीरॉयड क्रीम एवं प्रशासक औषधियों का उपयोग किया जाता है, जो कि चिकनी हो और ऐसा मरहम लिया जाता है, जो कि त्वचा को उत्तेजित करने वाला न हो। जख्म को और फटी चमड़ी को नरम बनाने और आराम दिलाने के लिए इनका उपयोग किया जा सकता है और वल्वा की सफाई के लिए साबुन की जगह इनका उपयोग कर सकते हैं। क्रीम और लोशन के रूप में ये मिलते हैं और कैमिस्ट से बिना डॉक्टर से पर्ची लिखाये भी मिल जाती हैं।

वल्वल त्वचा की देखभाल महिला स्वयं करें

यदि आपको यह समस्या है या उसका अंदेशा है तो तंग माप के टाईटस या ट्राउसर मत पहनें। सिन्थैटिक जांघिये न पहने और सूती कपड़े के भी ऐसे जांघिए पहने जो बहुत कसे हुए न हो। त्वचा को साफ करने के लिए हल्के साबुन का इस्तेमाल करें।

वल्वा में सूजन का सबसे अधिक सामान्य कारण

वल्वा में सूजन के सबसे सामान्य कारण को बार्थोलिनस काइसटस कहा जाता है। बार्थोलिन ग्रन्थियाँ बहुत ही छोटी दो ग्रन्थियाँ हैं, जो कि योनि द्वार के दोनों ओर होती हैं। उस ग्रन्थि में छोटी नलियाँ होती हैं। अगर वे त्वचा के अणु या स्राव से बन्द हो जायें तो उसमें पुष्टि बन सकती है (तरल द्रव्य से भरी थैली)। यह पुष्टि मटर के दाने से लेकर गोल्फ की बॉल जैसी हो सकती है।

बार्थोलिन काइसटस का उपचार

इसका उपचार बहुत सी बातों पर निर्भर रहता है, पुष्टि का आकार, कितना पीड़दायक है, क्या संक्रमित है और आप का डॉक्टर कौन सी उपचार विधि को चुनता है। कुछ तो एंटीबायोटिक के खाने मात्र से ठीक हो जाते हैं। कभी-कभी डॉक्टर उसमें एक नली डालने का निश्चय कर सकते

हैं। (मोटे धागे जैसी) यह नली 2 से 4 हफ्ते तक उसी जगह पर रहती है। इससे तरल पदार्थ बाहर बह जाता है और इससे योनि के दोनों पक्षों पर एक छोटा सा छेद हो जाता है। 2-4 हफ्ते में उस नली को निकाल दिया जाता है।

आन्तरिक प्रजनन अंग

प्रमुख स्त्री आन्तरिक प्रजनन अंग का विवरण निम्नलिखित है

योनि

योनि एक पेशीय, तन्तुयुक्त आच्छद होता है। इसमें शिराओं का गुच्छा पाया जाता है। यह बहुत ही लचीला होता है। सामान्य हालत में यह सिकुड़ा हुआ अनेक तहों का बना होता है। आच्छद के संकुचन तथा विमोचन का कार्य ज्यादातर ऐच्छिक होता है। इसमें स्तरित शल्की उपकला तन्तु मौजूद होते हैं। बाह्य कोष श्लेष्मा पैदा नहीं करते हैं, लेकिन वे अपने अन्दर विद्यमान ग्लाइकोजन को जीवाणुओं की प्रतिक्रिया के बाद लैक्टिक अम्ल में बदलकर बाहर छोड़ते हैं। इससे योनि की प्रतिक्रिया सदा अम्लीय बनी रहती है और वह संक्रमण से बची रहती है। इसका मुख्य कार्य शिश्न के प्रवेश के लिए प्रावधान उत्पन्न करना तथा शुक्राणुओं के एकत्रित होने के लिए, अल्प अवधि के लिए जगह बनाना होता है। योनि के उपकला तन्तु दवाइयों को भी शोषित कर सकते हैं।

गर्भाशय

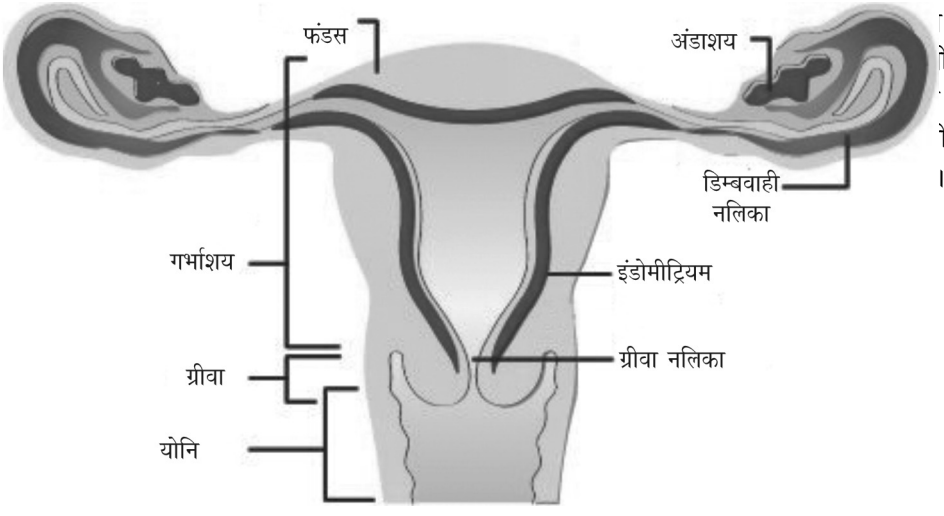

में गर्भाशय
ोचे की ओर
की लम्बाई
ो है। इसका
। प्रसवोपरांत

गर्भाशय ऊपर से पर्युदर्या (संयोजी उत्तक ;ब्वददमबजपअम ज्पेनमद्ध से बनी परत) से ढका रहता है। इसके बाद एक पेशीय तह पाई जाती है, जिसको गर्भाशय पेशीस्तर कहते हैं। इसमें तीन प्रकार की पेशियाँ होती हैं (क) लम्बाकार पेशी, (ख) अधिक बड़ी जिसमें पेशियों का रज्जुक अथवा तार विकर्णवत होते हैं और (ग) अत्यल्प पेशियाँ होती हैं। गर्भाशय पेशीस्तर के बाद गर्भाशय अन्तःस्तर पाया जाता है जिसमें नलिकायुक्त ग्रन्थियाँ एक नरम तह के नीचे पाई जाती हैं।

गर्भाशय को तीन भागों में विभाजित किया जाता है (1) फण्डस, (2) संकीर्ण संयोजक तथा (3) ग्रीवा। गर्भाशय के ऊर्ध्व भाग को फण्डस कहते हैं। यहाँ से अण्डवाहिनियाँ आरम्भ होती हैं। संकीर्ण संयोजक की चौड़ाई 0.5 सेमी. होती है। यहाँ से माँसपेशियों का अनुपात कम होता जाता है। ग्रीवा का आकार गोल-सा होता है जिसका व्यास 3 सेमी. होता है। ये सब एक श्लेष्मिक झिल्ली से ढका रहता है। साधारणतया गर्भाशय योनि के ऊपर 90 डिग्री के कोण पर झुका रहता है। नीचे से यह योनि की माँसपेशियों पर टिका होता है।

गर्भाशय के कार्य इसका मुख्य कार्य मासिक स्राव करना है। यह गर्भावस्था के समय अण्डाणु प्रवेश के लिए तथा भ्रूण धारण या स्थापन के लिए स्थान बनाता है। भ्रूण के पोषण के लिए पर्याप्त मौका प्रदान करना तथा प्रसव के समय अपनी पेशियों के संकुचन एवं विमोचन के कार्य से भ्रूण को बाहर निकालने में मदद करना भी इसी का कार्य है।

ग्रीवा परक कैंसर

ग्रीवा परक कैंसर का खतरा

जिन महिलाओं को ग्रीवा परक कैंसर का खतरा रहता है वे हैं (1) जिनके सम्भोग के कई साथी होते हैं (2) जो किशोरावस्था या बीस वर्ष की कम आयु से यौनपरक सम्भोग शुरू कर देती हैं। (3) जिनकी जननेन्द्रिय पर मस्से रह चुके हों या यौन सम्बन्धों से फैलने वाले संक्रामक रोगों से लम्बे समय से ग्रस्त हों।

ग्रीवा परक कैंसर के लक्षण

प्रारम्भिक स्थिति में, ग्रीवा-परक कैंसर के कोई लक्षण दिखाई नहीं देते। लक्षण तब दिखते हैं जब कैंसर के सैल आस-पास की कोशिकाओं में घुसना शुरू कर देते हैं। सबसे सामान्य लक्षण हैं- असामान्य स्राव। नियमित माहवारी पीरियडस के बीच रक्तस्राव शुरू हो सकता है या खत्म हो सकता है अथवा सम्भोग के बाद भी हो सकता है। माहवारी रक्तस्राव पहले की अपेक्षा लम्बी अवधि तक हो सकता है और सामान्य से भारी भी हो सकता है। योनि से होने वाले स्राव का बढ़ जाना ग्रीवा परक कैंसर का एक कारण होता है। ये लक्षण कैंसर के भी हो सकते हैं एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी किसी अन्य समस्या के कारण भी हो सकते हैं। डॉक्टर ही सही कारण बता पाते हैं। अगर इनमें से कोई भी लक्षण दिखाई पड़ें तो महिला डॉक्टर के पास जाना जरूरी होता है।

ग्रीवा परक कैंसर से बचाव

हाँ, ग्रीवा परक कैंसर बचा जा सकता है, यदि हम ग्रीवा से होने वाले स्राव स्मीयर या पांप स्मीयर का नियमित टेस्ट करवाते रहें तो ग्रीवा में होने वाले बदलाव का जल्दी पता चल जायेगा जिससे इलाज सम्भव है।

ग्रीवा का स्मीयर (मैल) या पैप स्मीयर टेस्ट

महिला की ग्रीवा के स्वास्थ्य का परीक्षण करने के लिए यह एक सरल सा परीक्षण है। इसे स्पीयर टेस्ट इसलिए कहते हैं कि डॉक्टर या नर्स ग्रीवा से थोड़ा सा सैम्पल लेते हैं और उसे शीशे की स्लाइड पर (स्मीयर) पोत देते हैं ताकि माइक्रोस्कोप से उसका अध्ययन कर सकें।

स्मीयर टेस्ट किसे करवाना चाहिए?

सम्भोग करने वाली महिलाओं को हर 3 से 5 साल के भीतर स्मीयर टेस्ट करवाना चाहिए।

सम्भोग न करने वाली महिला के लिए स्मीयर टैस्ट करवाने की जरूरत

सम्भोग न करने वाली महिलाओं में ग्रीवा परक कैंसर अत्यन्त दुर्लभ है, इसलिए अधिकांश संस्तुतियाँ यही कहती हैं कि सम्भोग के बिना महिला को इस टेस्ट की जरूरत नहीं।

पैप स्मीयर करने का तरीका

हल्का गर्म वक्ष्ण यन्त्र योनि में डाला जाता है ताकि दोनों दीवारों को अलग करके डॉक्टर ग्रीवा को देख सके। लकड़ी की चिमटी (जिह्वा दबाने वाली चिमटी से भी पतली) को ग्रीवा में घुमाया जाता है और स्मीयर को शीशे की पट्टी पर डाल दिया जाता है।

स्मीयर टैस्ट करवाने का श्रेष्ठ समय

एक माहवारी पीरियड से दूसरे-पीरियड के ठीक आधे या बीचों-बीच वाले दिन यह टेस्ट करवाना सबसे श्रेष्ठ है। इस समय ग्रीवा से सैल का सैम्पल लेना बड़ा सरल होता है।

ग्रीवा परक कैंसर से बचाव के लिए वैक्सीन

हाँ, ग्रीवा परक कैंसर के 70 प्रतिशत रोगियों को होने वाले हार्मोन पैपिल्लोमा नामक वाइकस से बचाव के लिए अब (एच.पी.वी.) वैक्सीन उपलब्ध हो गई है।

एच.पी.वी. वैक्सीन किसे देना चाहिए?

यह वैक्सीन 9 से 26 वर्ष की आयु की लड़कियों और महिलाओं के लिए होता है। वाइरस होने से पहले दिए जाने पर यह काम करता है।

एच.पी.वी. वैक्सीन देने का तरीका

यह वैक्सीन तीन महीने में इंजैक्शन द्वारा दी जाती है।

शरीर पर उसके क्या प्रभाव हो सकते हैं?

इसमें दर्द, सूजन, खुजली, इंजैक्शन वाली जगह पर लाली, बुखार चक्कर और घबराहट हो सकती है।

ग्रीवा परक कैंसर से बचाव के लिए वैक्सीन लेने वाले हर किसी का क्या बचाव हो सकता है?

हो सकता है कि यह वैक्सीन हर किसी को बचा न सके और ग्रीवा पर कैंसर के सभी प्रकारों का इससे बचाव नहीं होता, इसलिए नियमित रूप से इसका परीक्षण होते रहना जरूरी है।

अण्डवाहिनियाँ

ये माँसपेशीय नलिकाएँ हैं, जो गर्भाशय के ऊपर के भाग के दोनों ओर पाई जाती हैं। इनका दूसरा भाग अण्डाशय से जुड़ा रहता है। अन्दर की ओर श्लेष्मिक झिल्ली होती है। अण्डवाहिनी को चार भागों में बाँटा जा सकता है। बाहर वाले भाग को वायुकोष्टिका कहते हैं जिसमें अँगलियों जैसी उभरी हुई संरचना पाई जाती है। ये संरचनाएं अण्डाशय के पास होते हैं। तुम्बिका

अण्डवाहिनियों का सबसे लम्बा भाग होता है। इसकी दीवारें पतली और लचीली होती है। अन्तराली अथवा अन्तराकाशी भाग छोटा, संकरा एवं गर्भाशय की ऊपरी दीवार से जुड़ा हुआ होता है। वायुकोष्टिका का आन्तरिक व्यास अन्य तीनों से बड़ा तथा अन्तराकाशी भाग का व्यास सबसे छोटा लगभग 1 एम. एम. होता है।

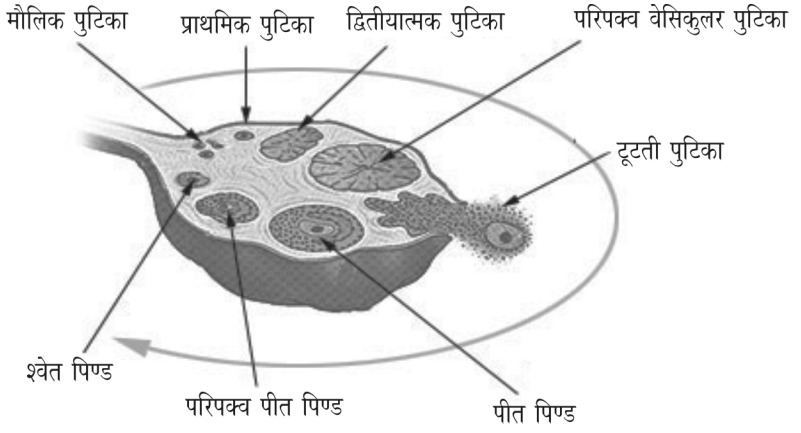

चित्र :

आन्तरिक श्लेष्मिक झिल्ली के साथ उपकला तन्तु भी पाए जाते हैं, जो श्लेष्मा भी स्रावित करते हैं। यह गर्भाशय की ओर प्रवाहित होता है। इस श्लेष्मा में प्रोटीन अधिक होता है जिससे बाद में युग्मनज अपना पोषण प्राप्त करता है।

दोनों अण्डाशय पुरुष के वृषणों के समान ही कार्य करते हैं। ये अण्डाकार होते हैं। सतह असमान होती है तथा रंग भूरापन लिए हुए गुलाबी। किशोरावस्था में इनकी लम्बाई 3.5 सेमी., चौड़ाई 2.0 सेमी., मोटाई 4.0 सेमी. तथा वजन 7.0 ग्राम. होता है। 60 वर्ष की अवस्था होने पर ये संकुचित हो जाते हैं, इनका रंग श्वेत हो जाता है तथा वजन आधे से भी कम रह जाता है। अण्डवाहिनियों का मुख्य कार्य, अण्डक तथा शुक्राणु के मिलने के लिए स्थान बनाना होता है। हर आर्तव चक्र के समय अण्डक अण्डवाहिनी से होते हुए गर्भाशय में प्रवेश करता है।

ग्रीवा परक कैंसर

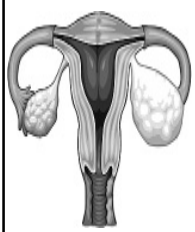

किन महिलाओं को अण्डकोश का कैंसर होने का खतरा होता है?

अण्डकोश के कैंसर के निश्चित कारणों की जानकारी नहीं है। फिर भी, शोधकार्यों से पता चलता है कि निम्नलिखित कारण रोग की सम्भावनाओं को बढ़ा सकते हैं। (1) पारिवारिक इतिहासः जिस महिला के प्रथम सम्बन्धी (माँ, बहन, बेटी) अण्डकोश के कैंसर रोग से ग्रस्त रह चुकी हों, उन्हें यह रोग हो जाने का बड़ा खतरा रहता है। (2) आयु वृद्धि के साथ ही इसकी सम्भावनाएँ बढ़ती हैं। सामान्यतः अण्डकोश के कैंसर पचास वर्ष से ऊपर की महिलाओं को होते हैं, साठ से ऊपर वालों को सबसे अधिक खतरा रहता है। (3) जिन

महिलाओं की कोई सन्तान नहीं होती उन्हें इस कैंसर की सम्भावना अधिक अधिक रहती है।

अण्डकोश के कैंसर के लक्षण क्या हैं?

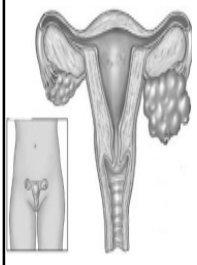

अण्डकोश के कैंसर के लक्षण वही हैं, जो कि अण्डकोश की सुसाध्य स्थितियों के होते हैं, जैसे माहवारी में बाधा, पेट में दर्द। कभी-कभी लक्षण अस्पष्ट भी हो सकते हैं, जैसे कि दस्त लगना या वजन घटना आदि। इसलिए मरीज को डॉक्टर के पास नियमित रूप से जाते रहना चाहिए।

अण्डकोश में कैंसर के उपचार के क्या विकल्प हैं?

अण्डकोश के कैंसर वाले रोगियों के लिए उपचार के विकल्प और परिणाम इस पर निर्भर रहते हैं कि निदान से पहले वह किस प्रकार का कैंसर था और कितना फैल चुका था।

अण्डकोश के कैंसर से बचाव के लिए क्या कोई स्क्रीनिंग टेस्ट है?

अण्डकोश के कैंसर का प्रारम्भिक स्थिति में ही निदान कर पाने वाला कोई स्क्रीनिंग टेस्ट अभी तक नहीं बना है।

अण्डाशय

साधारण रूप से अण्डाशय दो तरह के होते हैं। हर अण्डाशय में से अण्डाणु निकलकर अण्डवाहिनी में प्रवेश करता है। ये अण्डवाहिनियाँ पेशीय गोल नलियाँ होती हैं, स्थान के अनुसार ये भिन्न-भिन्न प्रकार की होती हैं। अण्डाशय चपटे बादाम के आकार के होते हैं, जो गर्भाशय के दोनों ओर स्थित होते हैं। इनका मुख्य कार्य है अण्डाणु को विकसित करना तथा उन्हें तक पहुँचाना। ये आन्तरिक स्थानीय हार्मोन का स्राव भी पैदा करते हैं। यथा ईस्ट्रोजन, प्रोजस्टीरोन आदि। अण्डाशय के बाह्य आवरण में छोटे-छोटे स्पष्ट पुटिकाय अथवा आशय पाए जाते हैं। इन्हें ग्राफी पुटक कहते हैं। जन्म के समय अण्डाशयों में लगभग 2,00,000 पुटक तक पाए जाते हैं।

अनुप्रस्थ काट से अण्डाशय के दो भाग दिखाई पड़ते हैं वल्कुट तथा मध्यांश। मध्यांश अथवा मेडूला में कई रक्त नलिकाएँ होती हैं जिनमें शिराएँ तथा धमनियाँ दोनों ही होती हैं। इनके अलावा अरेखित पेशीय तन्तु भी पाए जाते हैं।

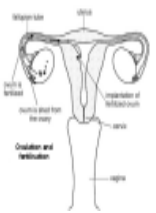

अण्डकोष की पुष्टि

अण्डकोष के अन्दर या ऊपर जब सूजन हो जाती है या कुछ उग आता है तो उसे अण्डकोष की पुष्टि (Endorsment) कहते हैं। यह सख्त भी हो सकती है और तरल भी।

अण्डकोष की पुष्टि में क्या कैंसर की सम्भावना रहती है?

अण्डकोष में उग आने वाले पदार्थ अधिकतर कैंसर के नहीं होते।

अण्डकोष की पुष्टि के लक्षण क्या हैं?

अण्डकोष की पुष्टि के निम्नलिखित लक्षण हो सकते हैं- (1) अण्डकोष की पुष्टि में अधिकतर औरतों को किन्हीं लक्षणों की अनुभूति नहीं होती, विशेषकर अगर वे छोटे हों। (2) कुछ पुष्टि बड़ी हो जाती हैं तो हो सकता है कि उदर में सूजन पैदा करें। (3) पुष्टि कहाँ पर है, कितनी

बड़ी है उसके अनुसार ही मूत्राशय या मल पर दबाव पड़ता है और हो सकता है कि आपको जल्दी-जल्दी (टायलेट) शौचालय में जाना पड़े। (4) आपको पेट में कुछ कष्ट हो सकता है और सम्भोग भी कष्टदायक या पीड़ा भरा हो सकता है। (5) इसका महावारी पीरियड पर भी प्रभाव पड़ सकता है, रक्त स्राव अनियमित हो सकता है, पहले के सामान्य प्रवाह से भारी या हल्का हो सकता है। (6) चेहरे या शरीर पर अधिक बाल आ सकते हैं। (7) आवाज भारी हो सकती है।

अण्डकोश की पुष्टि का उपचार क्या है?

कभी-कभी पुष्टि बनती है और अपने आप गायब भी हो जाती है जबकि कभी-कभी उसे शल्यक्रिया द्वारा निकालना पड़ सकता है। आपका डॉक्टर आपको उसकी सभी सम्भावनाओं के सम्बन्ध में समझाएगा।

पौलीकायस्टिक ओवरी सिन्डरोम (पी.सी. ओस) क्या होता है?

पौलीकायस्टिक का सामान्य अर्थ है 'बहुत सी पुष्टियाँ' जो कि अल्टरासाऊण्ड स्कैन से अण्डकोश पर दिख जाती है।

पी.सी. ओस के लक्षण क्या हैं?

पी.सी. ओस के लक्षणों में शामिल हैं (1) महावारी पीरियड की अनियमितता या बिल्कुल न होना (2) अनउर्वरकता (3) शरीर पर अनपेक्षित बाल (4) मुँहासे (5) वजन बढ़ना (6) पेट में तकलीफ।

पी.सी. ओस का उपचार क्या है?

पी.सी. ओस का उपचार हार्मोनपरक दवाओं या शल्यक्रिया द्वारा हो सकता है। उपचार किस प्रकार किया जाए इसका निर्णय डॉक्टर ही कर सकता है।

यौवनारम्भ (Puberty)

यौवनारम्भ वह समय है जबकि शरीरपरक एवं यौनपरक लक्षण विकसित हो जाते हैं। हॉर्मोन में होने वाले बदलाव के कारण ऐसा होता है। ये बदलाव आप को प्रजनन के योग्य बनाते हैं।

यौवनारम्भ का समय हर किसी में यह अलग-समय पर शुरू होता है और अलग अवधि तक रहता है। यह जल्दी से जल्दी 9 वर्ष और अधिक से अधिक 13-14 वर्ष की आयु तक प्रारम्भ हो जाता है। यौवन विकास की यह कड़ी सामान्यतः 2 से 5 वर्ष तक की होती है। कुछ किशोरियों में दूसरी हम उम्र, दूसरी लड़कियों से पहले यौवन विकास पूरा भी हो जाता है।

लड़कियों में यौवनारम्भ के लक्षण शरीर की लम्बाई और नितम्बों का आकार बढ़ जाता है। जननेन्द्रिय के आस-पास, बाहों के नीचे और योनि के आस-पास बाल दिखने लगते हैं। शुरू में बाल नरम होते हैं पर बढ़ते-बढ़ते कड़े हो जाते हैं। लड़की का रजोधर्म या माहवारी शुरू हो जाती है जो कि योनि में होने वाला मासिक रक्तस्राव होता है, यह पाँच दिनों तक चलता है, जनन तंत्र पर हॉर्मोन के प्रभाव से ऐसा होता है। त्वचा तैलीय हो जाती है जिससे चेहरे पर मुँहासे निकल आते हैं।

यौवनारम्भ के दौरान स्तनों में बदलाव स्तनों का विकास होता है और इस्ट्रोजन नामक स्त्री हॉरमोन के प्रभाव से बढ़ी हुई चर्बी के वहाँ एकत्रित हो जाने से स्तन बड़े हो जाते हैं।

यौवनारम्भ के परिणाम स्वरूप औरत के प्रजनन अंगों में बदलाव जैसे ही यौवनारम्भ की प्रक्रिया शुरू होती है, शरीर के अन्दर हारमोन बनने लगते हैं जनन अंगों में बदलाव शुरू लगते हैं। योनि पहले की अपेक्षा गहरी हो जाती है और कभी-कभी युवतियों को अपनी जांघिया (पैन्टी) पर कुछ गीला- गीला महसूस हो सकता है जिसे कि यौनिक स्राव कहा जाता है। गर्भाशय लम्बा हो जाता है और गर्भाशय का अस्तर घना हो जाता है। अण्डकोश बढ़ जाते हैं और उसमें अण्डे के अणु उगने शुरू हो जाते हैं और हर महीने होने वाली 'अण्डोत्सर्ग' ;व्अनसंजमद्ध की विशेष घटना की तैयारी में विकसित होने लगते हैं।

प्रजनन की कार्यप्रणाली (Process of Reproduction)

स्त्री प्रजनन-चक्र के दो प्रमुख अंग होते हैं (1) अण्डाशयी चक्र तथा (2) गर्भाशयी चक्र। अण्डाशयी चक्र को पुनः दो भागों में बाँटा गया है (क) पुटकीय चक्र तथा (ख) पीतपिण्ड प्रावस्था अथवा लूटिअल चक्र।

अण्डाशयी चक्र

अण्डाशयी चक्र को दो भागों में बाँट कर अध्ययन कर सकते हैं (1) पुटकीय चक्र, (2) लूटिअल चक्र।

पुटकीय चक्र

पुटकीय चक्र की परिपक्वता के पूर्व की अवस्था में उसमें आद्यजनन कोशिकाएँ पाई जाती हैं जिनमें अण्डाणु एक चपटे पतले उपकला तन्तु के स्तर से आवृत्त रहते हैं। अण्डाशय के अधिकतर भाग में वल्कुट होता है, जिसमें आद्यजनन कोशिकाएँ भरी रहती हैं। ये आपस में एक कोशिकीय संयोजक तन्तु के आवरण से पृथक् रहती हैं। परिपक्वता के समय चपटे उपकला तन्तु, घनाकार षट्फलक का आकार ले लेते हैं, जो क्रम प्रसरण या प्रचुरोद्भवन के बाद अण्डक के चारों ओर कई परतें बनाते हैं। इसके पश्चात् पुटक उपकला में छोटे-छोटे कोटर उत्पन्न हो जाते हैं, जिनमें द्रवीय पदार्थ भरा रहता है। इसको पुटिका द्रव कहते हैं। जैसे-जैसे पुटक का विकास होता है; वैसे-वैसे उसका आकार द्रव्य के इकट्ठा होने से बढ़ने लगता है तथा अण्डाशय के ऊपर के दबाब या धक्के के कारण आ जाता है। अब यह एक तनी हुई पुटी के समान दिखाई देता है। जब अन्तः पुटकीय दबाब बढ़ने लगता है तथा बाह्य पुटकीय कोशिकाओं का अंशतः नाश होने लगता है तब पुटक का संविदाकरण होता है। इसी को अण्डोत्सर्ग कहते हैं। द्रवीय पदार्थ के दबाब से अण्डक बाहर निकलकर पर्युदर्या गुहा (Peritorieal Cavity) में प्रवेश करता है।

यही पूर्ण परिपक्व मानव अण्डक है, जो सभी शारीरिक कोशिकाओं में सबसे बड़े आकार का होता है जिसका व्यास 130 माइक्रोन होता है। उसमें जीवद्रव्य होता है। बाह्य आवरण पतले परत का बना होता है। जीवद्रव्य में अनेक कणिकाएँ होती हैं, जिनमें पोषण के लिए आवश्यक तत्त्व होते हैं। पुटक से निष्कासित होकर अण्डक अपने में एक ध्रुवीय काय विकसित करता है। अण्डक एवं द्रव्य के निष्कासन के बाद पुटक निपात होता है। उसका छिद्र शीघ्र बन्द हो जाता है। अण्डक के निष्कासन तक की अवस्था को पुटकीय प्रावस्था कहते हैं। इसके साथ ही अण्डाशयी चक्र समाप्त हो जाता है और पीत, पिण्ड प्रावस्था आरम्भ होती है। अण्डक के निष्कासन के बाद पुटक पीत, पिण्ड में बदलता है।